eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

नागार्जुन की हिन्दी कविताओं में प्रकृति का सीधा सादा वर्णन

[1]डॉ0 वाचस्पति

[1]एसोसिएट प्रोफेसरः हिन्दी विभाग, जवाहरलाल नेहरू कॉलेज एटा (उ0प्र0)

Received: 07 July 2021, Accepted: 15 July 2021, Published with Peer Review on line: 10 Sep 2021

Abstract

नागार्जुन अविधा के कवि हैं। उनके शब्दों में वही शक्ति है, जो उन शब्दों से सम्बन्धित वस्तु में है। नागार्जुन की कविताओं में प्रकृति का सहज–सुलभ रूप मिलता है तो दुर्लभ और असहज रूप भी। उनकी प्रकृति सम्बन्धी कविताओं के कई आयाम हैं, कई रूप हैं।

Keywords- नागार्जुन की हिन्दी कविताएं, प्रकृति, सीधा सादा वर्णन एवं अकाव्यात्मकता।

ये कविताएँ सहज हैं, पर उनकी ग्राह्यता और मार्मिकता अन्योन्याश्रित है। वे प्रकृति सम्बन्धी कविताओं में प्रयोगधर्मी भी हैं। प्रयोगधर्मी इस अर्थ में कि जिन परिस्थितियों और शब्द प्रयोगों को उनकी अति साधारणता के कारण अकाव्यात्मक समझा गया है, उन्हीं से नागार्जुन अपनी रचनाओं को असाधारण धार देते हैं–

”हटी गंगा
किंतु, गीले पांक की दुनिया गई है छोड़
और उस पर
मल्लाहों के छोकरों की क्रमांकित पद–पंक्ति
खूब सुंदर लग रही है...
मन यही करता कि मैं भी
उन्हीं में से एक होता
और–
नंगे पैर, नंगा सिर
समूचा बदन नंगा...
विचरता पंकिल पुलिन पर
नहीं मछली ना सही,
दस–पांच या दो–चार क्या कुछ घुंघचियां भी नहीं मिलतीं?“1

हमें जो दिखाई पड़ता रहा है और जैसा दिखाई पड़ रहा है, उसे वे अपनी भाषा के मुहावरे में बोलते हैं। इसीलिए नागार्जुन की कविताओं में वक्तृता का अवरोध नहीं, वार्तालाप की गति मिलती है। नागार्जुन की प्रकृति संबंधित कविताओं में ढेरों कविताएँ प्रकृति के सीधे–सादे रूप पर हैं। इन सहज

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

रूपों पर लिखी गई कविताओं में प्रकृति से कवि के गहरे परिचय का पता चलता है। ऐसी कविताओं में प्रकृति, प्रकृति के रूप में है। बादल, कुहरा आदि पर ढेरों कविताएँ इसी कोटि में रखी जा सकती हैं। ये कविताएँ प्रकृति से कवि के राग और आह्लाद की सीधे–सीधे अभिव्यक्ति हैं। प्रकृति जैसी है, जिस रूप में है, उसी रूप में कवि को आकर्षित करती है। वह प्रकृति पर किसी आडंबर, रहस्य, वस्तु या रूप का आरोपण नहीं करता। ऐसी ही वास्तविक अभिव्यक्ति का एक उदाहरण द्रष्टव्य –

"उमड़ घुमड़ कर
नभ में छाए
बादल जहरीखाल के
हमको तो ये बेहद भाए
बादल जहरीखाल के
क्यों करते हैं इतने नखरे
बादल जहरीखाल के !
क्यों लगते हैं बिखरे–बिखरे
बादल जहरीखाल के !
सचमुच हमें निहाल करेंगे
बादल जहरीखाल के
हरे भरे होंगे ग्रामांचल
अब पौड़ी गढ़वाल के
उमड़ घुमडकर
नभ में छाए
बादल जहरीखाल के !"2

प्रकृति के सहज रूपों पर आधारित इन कविताओं में कवि ने अपने सूक्ष्म निरीक्षण और अनुभव को स्वर दिया है। प्रकृति के ये सहज रूप आम रूप से सब कहीं होते हैं पर इनमें बसे सौन्दर्य को पकड़ना नागार्जुन जैसे संवेदनशील रचनाकार के ही बूते की बात है। नागार्जुन जानते हैं कि सर्दी की रात में जमीन के नीचे की सतह गर्म होती है। जमीन के एक–एक गुण धर्म की परख रखने वाले कवि की सर्दी की रात पर कविता है–

"शिशिर की निशौ
धुंध में डूब गयी
दिशा दिशा दिशौ
भुरभुरी जमीन
गरम हैं सियारों के माँद

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

खण्डहर के कोने में
घुग्घु गया फाँद
नखत हुए उदास
खाँसता है चाँद
गगन के बीचोंबीच
हाँफता है चाँद
शिशिर की निशाऽऽ ।"3

सियारों की माँद को गर्म कहना और चाँद को रात में हाँफता हुआ देखना इस बात का स्वतः सूचक है कि यह कोई साधारण या आम रात नहीं है बल्कि सर्दी की लंबी रात है। यहाँ कवि बड़े ही सीधे शब्दों में प्रकृति के छुपे तत्वों को उभारता है।

ऊँचे पहाड़ी क्षेत्रों में दूर–दूर तक फैले देवदार को देखकर कवि के मन में खयाल आता है कि यह विशाल देवदार भी अजीब हैं। जाड़ा हो या गर्मी सभी मौसम में एक समान रहता है–

"तुम न होते भीत
तुम न होते पीत
कड़ी सर्दी घाम
तुम सदैव ललाम
... सरल सीधी डाल
सतत उन्नत भाल
शिखा नभ की ओर
सहज स्नेह विभोर
खड़े तीनों काल
देवदारु विशाल
... चिर कुमार किशोर
जगत के चितचोर
हिमालय के लाल
देवदारु विशाल ।"4

देवदार की इस अडिगता पर उसके परिस्थिति के विरुद्ध संघर्ष को कवि ने रेखांकित किया है। यह प्रकृति का सहज रूप तो अवश्य है पर इस सहज रूप में भी मानवीय जिजीविषा का भाव कहीं छुपा हुआ है, जिसको कवि ने आलोकित करने का प्रयास किया है। कवि का एक नाम 'यात्री' और 'घुमक्कड़' भी है जो उसके व्यापक भ्रमण की प्रवृत्ति का परिचायक है। विविध क्षेत्रीय स्थितियों, स्थानिक, देशीय–भौगोलिक विशेषताओं से कवि के गहरे संबंध का पता देती ये पंक्तियाँ

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

"नील नदी का तट–अंचल हो या दमिश्क के खुश्क इलाके
रतनगर्भ भारत हो चाहे पाकभूमि हो स्वर्ण प्रसविनी
काश्मीर का नन्दन वन हो
या कि सुभग नेपाल देश हो
हरी–भरी बर्मी धरती हो
धानों से लहराता श्यामल थाइलैण्ड हो
टिन की खान, रबर का जंगल
उर्वर भूमि मलाया चाहे स्वर्ण द्वीप या यवद्वीव हो
फारमोसा हो या जापान हो
विअतनाम हो या कि कोरिया
यह समग्र एशिया इन्हीं का चरागाह है।"5

इस कविता में सीधे–सीधे तो कोई प्रकृति–चित्रण नहीं है। पर सभी स्थलों के साथ सिर्फ एक विशेषण जोड़कर कवि ने इन स्थलों की मूलभूत प्राकृतिक विशेषता उजागर की है। यथा, दमिश्क के खुश्क इलाके, रत्नगर्भ भारत, कश्मीर का नंदन वन, हरा–भरा बर्मा, धानों से लहराता थाईलैण्ड आदि। नागार्जुन ने ऋतुओं पर कई कविताएँ लिखी हैं। इसके साथ ही मौसम के विविध रूप, उनके बदलते मिजाज को भी कवि ने कविता का विषय बनाया है। एक सीधी सहज कविता है– 'कुहरा क्या छाया', लेकिन इसमें केवल कुहरे का वर्णन नहीं है, एक अनुभव किया हुआ संपूर्ण चित्र है। शुक्ल जी ऐसे काव्यस्थलों के कायल थे जहाँ प्रकृति के सहज रूप का चित्रण आलंबन–रूप में होता हो। इसकी कुछ पंक्तियाँ–

"कुहरा क्या छाया
बढ़ गयी शिशिर की बीस गुनी माया
कुहरा क्या छाया
डूबी थी रात, दिल भी डूबा है
ठिठुरन की हद है, गजब है अजूबा है
दिगन्त की साँसों में संशय समाया
कुहरा क्या छाया।" 6

प्रकृति की एक घटना 'कुहरा' को कवि मानव मन से जोड़ता है– यही कविताई है। हृदय के किसी भाव का संसार या प्रकृति के किसी रूप से बार–बार सामंजस्य होने पर वह उस भाव का आलंबन बन जाता है। इसी से उसकी अभिव्यक्ति में रसात्मकता आती है और कविता संभव हो पाती है। प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानी 'पूस की रात' पढ़ते समय कहानी में चित्रित परिस्थिति से पाठक का ऐसा हृदय साम्य होता है कि जैसे सचमुच ठंड लग रही हो – हाड़ कँपा देने वाली पूस की रात।

कुछ वैसी ही सफलता नागार्जुन ने पाई है, जब वे कहते हैं कि (कुहरे में) 'डूबी थी रात, दिल भी डूबा हैं – मानो अब कोई जोर नहीं चलेगा, जब शशि रवि तक दुबक गए तो हमारी क्या बिसात? इसी क्रम में नागार्जुन ने प्रकृति के सुन्दर लुभावने और आकर्षक रूपों पर भी कई कविताएँ लिखी हैं। ध्यातव्य है कि वे चिनार की दीर्घजीविता पर अक्सर सोचते हैं। शायद उन्हें निरर्थक दीर्घजीविता प्रिय नहीं है तभी वे विरोधस्वरूप एक बच्चे चिनार के जरिए बुजुर्गों की दीर्घजीविता के दंभ को ललकारते हैं –

"बच्चा चिनार
उदास है
उसने इन्कार कर दिया
बढ़ने से
अपने बुजुर्गों का चिर जीवन
बच्चा चिनार पसंद नहीं करता

गंभीर होकर कहा बच्चा चिनार ने–
"अच्छा हुआ अल्पजीवी मैदानी बुजुर्ग इधर नहीं आए?
वर्ना हमारे चिरजीवी बुजुर्गों का गुमान दस गुना बढ़ जाता!"7

यहाँ यह बात देखने लायक है कि प्रकृति के सीधे–सादे चित्रण में भी वे अपने जीवनानुभव को घोल देते हैं। उनका जीवनानुभव प्रकृति के साथ ऐसा घुलता है कि उसे अलग–अलग देख पाना लगभग नामुमकिन हो जाता है। एक समर्थ कवि ही ऐसी रचना कर सकता है। नागार्जुन की एक अन्य कविता है– 'भर रहा है चमक'। इसमें नागार्जुन सूरज की चमक को निचली घाटियों को निहाल करने वाला, धान के सीढ़ीनुमा खेतों के नवांकुरों को चमकाने वाला, कच्ची नासपातियों के अन्दर जीवन–रस भरने वाला और भुट्टों के दूधिया दानों को दमदार बनाने वाला प्रकाश का देवता कहते हैं। एक दूसरी कविता दृ 'सोनिया समन्दर' में कवि गेहूँ की पकी तैयार फसल को सोनिया समन्दर कहता है –

"बिछा है मैदान में
सोना ही सोना
सोना ही सोना
सोना ही सोना
गेहूँ की पकी फसलें तैयार हैं –
बुला रही हैं
खेतिहरों को।"8

प्रो. मैनेजर पाण्डेय के अनुसार ''एक भारतीय मनुष्य, भारतीय प्रकृति और भारतीय समाज दोनों के संश्लिष्ट अनुभव का समग्र रूप है और इसीलिए उसकी जिन्दगी में प्रकृति भी उसी तरह अनिवार्य हिस्से के रूप में मौजूद है, जैसे जीवन के दूसरे पक्ष। किसान के जीवन में प्रकृति देखने और अलग से आनंद लेने की कोई बाहरी वस्तु नहीं होती। अब अनुभव पर आधारित होने के कारण इन कविताओं में वह ताजगी है, जो प्रेम और प्रकृति पर केवल बौद्धिक दृष्टि से लिखी कविताओं में नहीं होती।''9 नागार्जुन अपनी एक कविता – 'इत्ती निर्लिप्तता नहीं चाहिए' में खीर – भवानी के दर्शनीय स्थल के चारों ओर फैले वयोवृद्ध चिनारों की समयातीत निर्लिप्तता पर मोहित हो उठते हैं। इस कदर मंत्रमुग्ध हो जाते हैं –

''दरअसल मैं देर तक उन्हीं में खोया रह जाता
अगर हिमिया परांठा तोड़तोड़ कर
मेरे मुँह के हवाले न करती गई होती।''10

नागार्जुन इन वृद्धातिवृद्ध चिनारों को देखते–देखते इतना खो जाते हैं मानो, एक–एक पत्ता गिन रहे हों या जैसे कोई अपने पूर्वजों से मिलने का अवसर पा गया हो। इस अवसर पर कवि की तल्लीनता देख शुक्ल जी की याद आती है–

''वन, पर्वत, नदी, निर्झर आदि प्राकृतिक दृश्य हमारे राग या रतिभाव के स्वतंत्र आलंबन हैं, उनमें सहृदयों के लिए सहज आकर्षण वर्तमान हैं। इन दृश्यों के अंतर्गत जो वस्तुएँ और व्यापार होंगे उनमें जीवन के मूल स्वरूप और मूल परिस्थिति का आभास पाकर हमारी वृत्तियाँ तल्लीन होती हैं। जो व्यापार केवल मनुष्य की अधिक समुन्नत बुद्धि के परिणाम होंगे, जो उसके आदिम जीवन में बहुत इधर के होंगे, उनमें प्राकृतिक या पुरातन व्यापारों को भी तल्लीन करने की शक्ति न होगी।''11

नागार्जुन के प्रकृति–वर्णन के संदर्भ में एक बात उल्लेख्य है कि कई प्रकृति–संबंधी कविताओं में वे प्रकृति रूपों से अभिभूत होकर प्रकृति का एक पूर्ण चित्र खींचते हैं जो उल्लास का संचार करता है। उन्होंने पहाड़ी नदी का ऐसा ही चित्र खींचा है –

''नीचे,
बहुत नीचे,
बहोत नीचे''
सतपुली–सी गइराई में
अच्छी–खासी पहाड़ी नदी
प्रवाहित है जाने कब से ....

बीसियों पतले स्रोत
मिलकर धारा बनते हैं न !
चक्करदार पहाड़ी सड़कों से देखने पर
ये नदियाँ चाँदी की हँसुली–सी लगती हैं!"12

पहाड़ी नदी को 'चाँदी की हँसुली' कहने से जिस साम्य विधान का बोध होता है, वह बिम्ब ग्रहण का कारण हो रहा है। ऐसी कविताओं में कवि की भाषिक संवेदनशीलता उभर कर आई है। भाषा के अनेक सशक्त रूप सामने आते चलते हैं।

नागार्जुन की प्रकृति संबंधी कविताओं में ऋतु संबंधी कई कविताएँ हैं। इस क्रम की एक अच्छी कविता है– 'ऋतु सन्धि' –

"सामने सरपट पड़ा मैदान
है न हरियाली किसी भी ओर
तृण–लता–तरुहीन
नग्न प्रांतर देख
उठ रहा सिर में बड़ा ही दर्द
हरा धुँधला या कि नीला –
आ रहा चश्मा न कोई काम
किन्तु मुझको हो रहा विश्वास
यहाँ भी बादल बरसने जा रहा है आज
अब न सिर में उठेगा दर्द
लग रहा था आज प्रातःकाल पानी सर्द
गंगा नहाते वक्त
आया ख्याल
हिमालय में गल रही है बर्फ
आज होगा ग्रीष्म ऋतु का अंत।"13

कवि ऋतु परिवर्तन के समय की घटनाएँ बयान कर रहा है। उसकी नज़र घट रहे हर छोटे–छोटे परिवर्तन पर है। इस कविता में कवि की अनुभूति सामान्य जन की अनुभूति के मेल में दिखती है। बरसात के मौसम की शुरूआत की संभावना से नागार्जुन प्रफुल्लित हैं। इनके पूरे काव्य–संसार में एक भी कविता ऐसी नहीं मिलती है जिसमें वो बरसात के जाने का, खत्म होने का इंतजार कर रहे हों। तात्पर्य यह है कि प्रकृति के जो रूप नागार्जुन ने चुने हैं सुन्दरता उनका एक पक्ष है, दूसरा पक्ष उनकी उपयोगिता है।

नागार्जुन की प्रकृति संबंधी कई कविताएँ ऐसी हैं जिसमें वे आत्मविस्मृत दिखते हैं। उनकी अपनी सत्ता और प्रकृति की सत्ता एकमेव हो जाती है। अर्थात् प्रकृति के बीच कवि खो जाता है। तन्मयता की पराकाष्ठा का एक उदाहरण –

"पहल शुक्र का कर्णफूल जब
पीछे की नीरव घड़ियों में
रजनी को निखरा पाता हूँ
नील गगन के नक्षत्रों को
जब अविरल बिखरा पाता हूँ
तब मैं तुम्हें भूल जाता हूँ
जब ऋतुओं के संधिकाल में
विकृति वायु से आहत होकर
आकुल क्षुब्ध और उद्वेलित
सागर की उत्ताल तरंगें
वसुधा की मेखला चूमती
चतुर नाविकों की नौकाएँ
जब उन पर निःशक झूमती
तब उनका साहसमय जीवन
देख–देख मैं ललचाता हूँ
फिर तो तुम्हें भूल जाता हूँ।"14

कवि अपने प्रियतम को भी उस क्षण भूल जाता है जब यह प्रकृति के रूप पर मोहित और मुग्ध होता है। उसे दुविधा नहीं है कि किसे चुनूँ या उसे क्या पसंद है। प्रकृति की लय में लय मिलाकर मस्ती में झूम रहे नागार्जुन की पंक्ति है –

"हिल रही – डुल रही खिल रही – खुल रही
पूनम की फागुनी रात
पकड़ी ने ढक लिए अपने सब गात।"15

नागार्जुन के लिए प्रकृति कोई जीवन से अलग चीज नहीं है। ऐसा लगता है कि इनके परिवार की एक सदस्य प्रकृति भी है। किसी खास क्षण में जैसे अपने प्रियजनों की याद आती है वैसे ही नागार्जुन किन्हीं भावुक क्षणों में प्रकृति को याद करते हैं जिससे उनका कभी सम्पर्क रहा होता है। यही नहीं, कई बार वे जहाँ होते हैं वहाँ की प्रकृति से ऐसा रिश्ता बना लेते हैं कि चलते समय विदाई लेनी पड़ती है। उनकी कविता है।

1. "लगता ही नहीं कि यह वही पेड़ है!

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

पिछले साल जब हमने
इससे विदाई ली थी
यह हजार–हजार फलों से लद रहा था।
रसीले खटमिट्ठे फलों से " 16

2. "यात्रा के क्षणों में
इर्द–गिर्द दृष्टि गई
पल भर के लिए
काँप रहे थे
केले के नए–नए पात
हरे हरे पात
चीकने पात
साबित पात
विदा– वेला में
अनुमति में हिलते–से कोमल पात!
"फिर कब आओगे? "
हल्की जिज्ञासा थी, इंगितमय
'बुजुर्ग यायावर',
सच सच बतलाना
'अब, कब आओगे? '
जवाब में आँखें गीली हो आई,
चुपचाप, ऊपर पगडण्डियों की ओर
बढ़ते गये पैर ...."17

प्रकृति से ऐसा पवित्र, निश्च्छल और सच्चा प्रेम ढूंढे ही मिलेगा।

नागार्जुन की कविता में शेष सृष्टि के साथ मानव के रागपूर्ण संबंध का निर्वाह और इस संबंध की रक्षा की भावना व्याप्त है। 'डियर तोताराम' में कवि कहता है–

"उल्टा लटककर
वो कुतर रहा है नाशपाती
दस का यह गुच्छा ही
इसे जाने क्यों भाया ?
लीजिए, हमारी आहट पाकर
वो उड़ गया
पहाड़ी तोता ....." 18

इस सुन्दर प्राकृतिक दृश्य में कवि खो गया है और इस कविता का पाठक भी इसके सुन्दर बिम्ब में खो जाता है।

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

इस तरह प्रकृति के जिन सीधे–सादे रूपों को नागार्जुन ने लिया है उनका दायरा विशाल है। कहीं अति प्रिय रूप हैं तो कहीं अति साधारण रूप लेकिन इन सभी रूपों में प्रकृति अपने स्वाभाविक रूप में विद्यमान है। नागार्जुन अपनी रुचि अनुरूप प्रकृति के रूपों की छवि निर्मित भी करते हैं।

संदर्भ–

1. नागार्जुन आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने, पृ0सं0 35
2. नागार्जुन आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने, पृ0सं0 41
3. नागार्जुन हजार हजार बाहों वाली, पृ0सं0 99–100
4. नागार्जुन – अपने खेत में, पृ0सं0 37
5. नागार्जुन – अपने खेत में, पृ0सं0 37
6. नागार्जुन–हजार–हजार बाहों वाली, पृ0सं0 109
7. नागार्जुन आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने, पृ0सं0 32
10. नागार्जुन – ऐसे भी हम क्या ऐसे भी तुम क्या पृ0सं0 36
11. नागार्जुन आखिर ऐसा मैंने क्या कह दिया पृ0सं0 19
12. नागार्जुन आखिर ऐसा मैंने क्या कह दिया पृ0सं0 38–39
13. नागार्जुन – इस गुब्बारे की छाया में, पृ0सं0 81
14. नागार्जुन – खिचडी विप्लव हमने, पृ0सं0 85
15. नागार्जुन आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने पृ0सं0 25
16. नागार्जुन – ऐसे भी हम क्या ऐसे भी तुम क्या, पृ0सं0 57
17. नागार्जुन, आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने पृ0सं0 20